न्यायमूर्तिगण आई. एस. तिवाना और अमरजीत चौधरी, के समक्ष

श्री न्यायमूर्ति एस एस संधावालिया (सेवानिवृत्त) पूर्व मुख्य न्यायाधीश, पटना उच्च न्यायालय, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़, -याचिकाकर्ता।

बनाम

भारत संघ और अन्य,-प्रतिवादी।

1988 की

सिविल रिट याचिका संख्या 4838 12 जनवरी, 1990

भारत का संविधान, 1950- अनुच्छेद 221 और 222- *उच्च न्यायालय न्यायाधीश (सेवा की शर्तें) अधिनियम,* 1954- *धारा* 22-बी- *उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को वेतन- न्यायाधीश को नियुक्ति की तारीख पर अधिकार प्राप्त होता है- उसके अहित के लिए परिवर्तन या बदलाव की अनुमति नहीं दी जा सकती एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय में स्थानांतरण।*

अभिनिर्धारित किया गया कि इस परंतुक में और भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि संसद द्वारा प्रदान किए गए ये अधिकार न केवल उनकी सेवानिवृत्ति की तारीख के प्रकाश में बल्कि नियुक्ति की तारीख के प्रकाश में भी निर्धारित किए जाने हैं। ऐसा परंतुक के अंतिम शब्दों, अर्थात्, "उनकी नियुक्ति के बाद" के कारण है। ऐसा हो सकता है कि न्यायाधीश के रूप में उनकी नियुक्ति के बाद संसद द्वारा उन्हें कुछ और अधिकार या लाभ उपलब्ध कराए जाएं, फिर भी एक बार जब इन्हें अनुमति दे दी जाती है, तो किसी भी परिस्थिति में उनके नुकसान के अनुसार इसमें बदलाव या परिवर्तन नहीं किया जा सकता है। यह परंतुक इन अधिकारों को किसी भी सरकारी निर्देश के विरुद्ध प्रतिरक्षित करता है जो न्यायाधीश के लिए नुकसानदेह हो सकता है। पेंशन या भत्ते के अधिकार में स्पष्ट रूप से न केवल उनकी मात्रा बल्कि उनके भुगतान का तरीका, भुगतान का समय, भुगतान का स्थान और भारत के क्षेत्र के भीतर इन अधिकारों को लागू करने के उपाय भी शामिल हैं। "के संबंध में सही" शब्द अभिव्यक्ति की इस समग्रता को स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं। यह याचिकाकर्ता के मामले में और भी अधिक है, जिसे शुरू में इस न्यायालय की खंडपीठ में पदोन्नत किया गया था और फिर पटना उच्च न्यायालय में स्थानांतरित होने से पहले इस न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया गया था। तब तक उन्होंने अपने 15 वर्ष के लंबे कार्यकाल के कारण पूर्ण पेंशन और चिकित्सा सुविधाओं आदि सहित अन्य सहायक लाभों का वैधानिक अधिकार अर्जित कर लिया था। इस

न्यायालय में वर्षों केवल पटना में उनके स्थानांतरण की आकस्मिक परिस्थितियों के कारण उन्हें इन निहित अधिकारों से वंचित नहीं किया जा सकता है। इस न्यायालय में उनके स्थायी न्यायाधीश पद के तथ्य को संभवतः संविधान के अनुच्छेद 222 के तहत अनिवार्य स्थानांतरण के आदेश से ख़त्म नहीं किया जा सकता है। सच तो यह है कि उत्तरदाताओं का मामला यह भी नहीं है कि इस स्थानांतरण से उनकी मूल वरिष्ठता या अन्य अधिकारों में किसी भी तरह से व्यवधान उत्पन्न हुआ है। बल्कि इस स्थानांतरण का आदेश इस न्यायालय में उनके द्वारा प्रदान की गई सेवा को ध्यान में रखते हुए दिया गया था । इस प्रकार उन्हें उस न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया गया। इसके अलावा, शब्द का सामान्य शब्दकोश अर्थ

'इस परंतुक में होने वाला नुकसान, 'हित' की हानि या हानि या चोट है। इसलिए, यह पेटेंट है कि कोई भी प्राधिकारी किसी न्यायाधीश में निहित इन अधिकारों को उसकी नियुक्ति के बाद या अनुदान की तारीख या इन अधिकारों के निहित होने के बाद किसी भी समय बदल नहीं सकता है।

(पैरा 4)

संविधान के अनुच्छेद 226 *के तहत याचिका में प्रार्थना की गई है कि माननीय न्यायालय उत्तरदाताओं को निर्देश देने के लिए* परमादेश या कोई अन्य उचित रिट, आदेश या निर्देश जारी करने की कृपा करे :

(i) मामले का पूरा रिकॉर्ड पेश करना;

(ii) एक उपयुक्त विट, आदेश या निर्देश जारी किया जाए जिसमें उत्तरदाताओं को रिट याचिका में ऊपर किए गए दावों को अंतिम रूप देने और उन्हें याचिकाकर्ता को जारी करने का निर्देश दिया जाए;

(यूआई) इस माननीय न्यायालय द्वारा दी गई राहत से मिलने वाले सभी परिणामी लाभ याचिकाकर्ता को दिए जाएं;

(iv) उत्तरदाताओं को सभी दावों का भुगतान देय तिथि से लेकर वास्तविक भुगतान की तिथि तक 12 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज के साथ करने का निर्देश दिया जाए;

(v) याचिकाकर्ता को रिट याचिका के अनुलग्नकों की प्रमाणित प्रतियां दाखिल करने से छूट दी जाए;

(vi) उत्तरदाताओं को याचिका की अग्रिम सूचना देने की शर्त को समाप्त किया जाए;

(vii) याचिकाकर्ता की लागत याचिकाकर्ता को दी जाए।

याचिकाकर्ता की ओर से जे.एल. गुप्ता, वरिष्ठ अधिवक्ता, जसवन्त सिंह और

विक्रांत शर्मा, अधिवक्ता।

प्रतिवादी नंबर 1 के लिए एचएस बराड़, वकील और पीएस तेजी, वकील ।

H. उत्तरदाताओं संख्या 2 और 3 के लिए एस. रियार, सीनियर डीएजी पीबी,, ।

अशोक भान, वरिष्ठ अधिवक्ता गुलशन शर्मा के साथ, 'अधिवक्ता, *प्रतिवादी संख्या* 4 के लिए।

निर्णय

न्यायमूर्ति आई. एस. तिवाना,

(1) याचिकाकर्ता इस न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश और बाद में पटना उच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश हैं। वे 27 जुलाई 1987 को वहां से सेवानिवृत्त हुए।

उनके लगभग दो दशकों (मई, 1968 से 27 जुलाई, 1987) के शानदार करियर के दौरान उनके सामने आए सभी मामलों का निपटारा करने के बाद, उन्हें खुद ही मुकदमेबाजी के क्षेत्र में धकेल दिया गया, क्योंकि वे अपने रवैये की परवाह नहीं करते थे। किसी भी अन्य चीज़ की तुलना में संबंधित अधिकारी। वह उत्तरदाताओं के कार्यों से व्यथित है:-

(i) उसे देय ग्रेच्युटी की पूरी राशि जारी नहीं करना;

(ii) उन्हें देय अवकाश के बराबर नकद राशि की गणना करते समय उन विभिन्न भत्तों को शामिल नहीं किया गया है जो वह अपनी सेवानिवृत्ति से ठीक पहले ले रहे थे;

(iii) उच्च न्यायालय न्यायाधीश (सेवा की शर्तें) अधिनियम, 1954 (संक्षेप में, 1954 अधिनियम) की धारा 22-13 के तहत उन्हें देय राशि का भुगतान नहीं करना; और

(iv) चिकित्सा शुल्क की प्रतिपूर्ति के लिए उसके मामले पर निर्णय या मंजूरी नहीं दे रहा है।

हालाँकि, यहाँ यह कहा जा सकता है कि इस याचिका के दाखिल होने के बाद से, ऊपर (i) और (iv) में निर्दिष्ट शिकायतों का निपटारा कर दिया गया है और उत्तरदाताओं ने लगभग अपने दायित्व का निर्वहन कर दिया है। इस संबंध में अभी भी जिन सीमांत राहतों का दावा किया जा रहा है, उन पर इस फैसले के अंत में चर्चा की जाएगी, यानी, ऊपर (ii) और (iii) में निर्दिष्ट अन्य दो बहुत बहस वाले मुद्दों के निष्कर्ष के बाद।

(2) उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को क्या भुगतान करना है: भारत के संविधान का अनुच्छेद 221 निर्दिष्ट करता है जो इस प्रकार है: -

"221. *न्यायाधीशों का वेतन आदि:*

(1) प्रत्येक उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को ऐसे वेतन का भुगतान किया जाएगा जो दूसरी अनुसूची में निर्दिष्ट हैं।

(2) प्रत्येक न्यायाधीश अनुपस्थिति की छुट्टी और पेंशन के संबंध में ऐसे भत्तों और ऐसे अधिकारों का हकदार होगा जो समय-समय पर संसद द्वारा बनाए गए कानून के तहत या उसके तहत निर्धारित किए जा सकते हैं और, जब तक ऐसा निर्धारित न हो, ऐसे भत्तों और अधिकारों का हकदार होगा जो इसमें निर्दिष्ट हैं। दूसरी अनुसूची:

बशर्ते कि न तो न्यायाधीश के भत्ते और न ही अनुपस्थिति की छुट्टी या पेंशन के संबंध में उसके अधिकारों से उसकी नियुक्ति के बाद उसे कोई नुकसान होगा।

(3) जाहिर तौर पर यह प्रावधान संविधान के इस अनुच्छेद का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह उप अनुच्छेद (2) में उल्लिखित अधिकारों को पवित्र या हस्तक्षेप से प्रतिरक्षित बनाता है। दूसरे शब्दों में, एक न्यायाधीश के पेंशन प्राप्त करने के अधिकार और संसद द्वारा कानून के माध्यम से दिए गए ऐसे अन्य अधिकारों के साथ किसी भी तरह से छेड़छाड़ या बदलाव नहीं किया जा सकता है, जिससे उसे नुकसान हो। ये अधिकार 1954 के अधिनियम में अच्छी तरह से निर्धारित हैं, जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है। अधिनियम की धारा 2 के खंड (जी) के अनुसार, 'न्यायाधीश' में मुख्य न्यायाधीश भी शामिल हैं।

(4) इसके अलावा इस प्रावधान में और भी अधिक महत्व यह है कि संसद द्वारा प्रदान किए गए ये अधिकार न केवल उनकी सेवानिवृत्ति की तारीख के प्रकाश में बल्कि नियुक्ति की तारीख के प्रकाश में भी निर्धारित किए जाने हैं। ऐसा परंतुक के अंतिम शब्दों, अर्थात्, "उनकी नियुक्ति के बाद" के कारण है। ऐसा हो सकता है कि न्यायाधीश के रूप में उनकी नियुक्ति के बाद संसद द्वारा उन्हें कुछ और अधिकार या लाभ उपलब्ध कराए जाएं, फिर भी एक बार जब इन्हें अनुमति दे दी जाती है, तो किसी भी परिस्थिति में उनके नुकसान के लिए इनमें बदलाव नहीं किया जा सकता है। यह परंतुक किसी भी सरकारी निर्देश के विरुद्ध इन अधिकारों को प्रतिरक्षित करता है जो न्यायाधीश के लिए नुकसानदेह हो सकता है। पेंशन या भत्ते के अधिकार में स्पष्ट रूप से न केवल उनकी मात्रा बल्कि भुगतान का तरीका, भुगतान का समय, भुगतान का स्थान और भारत के क्षेत्र के भीतर इन अधिकारों को लागू करने के उपाय भी शामिल हैं। "के संबंध में सही" शब्द अभिव्यक्ति की इस समग्रता को स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं। यह याचिकाकर्ता के मामले में और भी अधिक है, जिसे शुरू में इस न्यायालय की खंडपीठ में पदोन्नत किया गया था और फिर पटना उच्च न्यायालय में स्थानांतरित होने से पहले इस न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया गया था। तब तक उन्होंने इस न्यायालय में अपने 15J वर्षों के कार्यकाल के कारण पूर्ण पेंशन और चिकित्सा सुविधाओं आदि सहित अन्य सहायक लाभों का वैधानिक अधिकार अर्जित कर लिया था। केवल पटना में उनके स्थानांतरण की आकस्मिक परिस्थिति के कारण उन्हें इन निहित अधिकारों

से वंचित नहीं किया जा सकता है। इस न्यायालय में उनके स्थायी न्यायाधीश पद के तथ्य को संभवतः संविधान के अनुच्छेद 222 के तहत अनिवार्य स्थानांतरण के आदेश से ख़त्म नहीं किया जा सकता है। वास्तव में, उत्तरदाताओं के मामले में ऐसा नहीं है कि इस स्थानांतरण ने उनकी मूल वरिष्ठता या अन्य अधिकारों को किसी भी तरह से वितरित किया हो। बल्कि इस स्थानांतरण का आदेश उनके द्वारा इस न्यायालय में की गई सेवा को ध्यान में रखते हुए दिया गया था। इस प्रकार उन्हें उस न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया गया। आगे इसमें 'नुकसान' शब्द का सामान्य शब्दकोषीय अर्थ आता है

परंतुक, 'हित' के लिए हानि या हानि या चोट है। इसलिए , यह पेटेंट है कि कोई भी प्राधिकारी किसी न्यायाधीश में निहित इन अधिकारों को उसकी नियुक्ति के बाद या अनुदान की तारीख या इन अधिकारों के निहित होने के बाद किसी भी समय बदल नहीं सकता है। *बी. मलिक* बनाम *भारत संघ* (1) मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा इस प्रावधान पर एक समान व्याख्या दी गई थी। हम उस फैसले में अपनाए गए तर्क का सम्मानपूर्वक पालन करते हैं। जैसा कि उसमें बताया गया है, इस प्रावधान को व्यापक रूप दिया जाना चाहिए, न केवल इसलिए कि यह संविधान का हिस्सा है, बल्कि इसलिए कि इसे एक लोकतांत्रिक समाज में ऐतिहासिक सामाजिक हित को सुरक्षित करने के लिए डिज़ाइन किया गया है। सामाजिक हित न्यायाधीशों की मनुष्यों और उनकी सरकार से स्वतंत्रता में निहित है ताकि वे मनुष्य और मनुष्य के बीच तथा मनुष्य और सरकार के बीच निडर और पक्षपात रहित न्याय कर सकें। इस बात पर ज़ोर देने की ज़रूरत नहीं है कि इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए उन्हें पूर्ण आर्थिक सुरक्षा प्रदान करनी होगी। यह परंतुक न्यायाधीश की नियुक्ति के समय इन अधिकारों को निश्चित रूप से तय करता है और बाद में होने वाली हानि से बचाता है।

(5) उपरोक्त उल्लिखित प्रावधान की इस व्याख्या के आलोक में , हम प्रतिस्पर्धी उत्तरदाताओं (प्रतिवादी संख्या 5, अर्थात, बिहार राज्य, सेवा के बावजूद उपस्थित नहीं हुए हैं) की ओर से उठाए गए प्रारंभिक आपत्ति में कोई योग्यता नहीं देखते हैं। इस आशय का कि चूंकि याचिकाकर्ता जुलाई, 1987 में पटना उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के रूप में सेवानिवृत्त हुआ, वह इस न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के भीतर किसी भी तरह की कार्रवाई का दावा नहीं कर सकता है और इसलिए, इस याचिका पर यहां विचार नहीं किया जा सकता है। हमारे समक्ष यह विवादित नहीं है कि इस याचिका में किए गए पेंशन संबंधी और अन्य सहायक दावों के लिए, याचिकाकर्ता की इस न्यायालय में प्रदान की गई सेवा को गिना जाना चाहिए और उस पर ध्यान दिया जाना चाहिए। फिर यह कैसे कहा जा सकता है कि कार्रवाई के कारण का एक हिस्सा भी इस न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में उत्पन्न नहीं होता है? हम बिल्कुल स्पष्ट हैं कि याचिकाकर्ता का मुख्य न्यायाधीश के रूप में यहां से पटना स्थानांतरण और सेवानिवृत्ति की आयु प्राप्त करने पर 27 जुलाई, 1987 को वहां से सेवानिवृत्ति इन अधिकारों को ख़राब नहीं करती है।

(6) याचिकाकर्ता का सटीक मामला यह है कि 1954 अधिनियम के तहत बनाए गए उच्च न्यायालय न्यायाधीश नियम, 1956 के नियम 2 के साथ पठित अखिल भारतीय सेवा (छुट्टी) नियम, 1955 के नियम 20-बी के अनुसार, उसकी छुट्टी का नकदीकरण या भुगतान उसे स्वीकार्य छुट्टी वेतन के नकद समकक्ष में वे सभी भत्ते शामिल हैं जो उसे उसकी सेवा के अंतिम महीने, यानी जून 1987 के दौरान भुगतान किए गए थे। दूसरे शब्दों में , वह उसे देय राशि निर्धारित करने के लिए कहता है

(1) एआईआर 1970 इलाहाबाद 268।

श्री न्यायमूर्ति एसएस संधवालिया (सेवानिवृत्त) पूर्व मुख्य न्यायाधीश, पटना उच्च न्यायालय, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ ***बनाम*** भारत संघ और अन्य (आईएस तिवाना, जे.)

उपर्युक्त प्रावधानों के तहत निम्नलिखित भत्तों पर ध्यान दिया जाना चाहिए: -

(i) सत्कार भत्ता @ रु. 500 अपराह्न;

(ii) संविधान के अनुच्छेद 221(2) के तहत देय प्रतिपूरक भत्ता रु. 900 अपराह्न;

(iii) नगर प्रतिपूरक भत्ता @ रु. 75 अपराह्न; और

(iv) 1954 अधिनियम की धारा 22-ए और 22-बी में निर्दिष्ट भत्ते।

(7) इसके विपरीत, उत्तरदाताओं का रुख यह है कि उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश सहित न्यायाधीशों को छुट्टी के नकद भुगतान की अनुमति 1955 के नियमों के नियम 20-बी के प्रावधानों के तहत दी जाती है और इस नियम के अनुसार, नकद के बराबर नकद भुगतान की अनुमति है। एक न्यायाधीश को देय अवकाश वेतन में केवल उसकी सेवानिवृत्ति की तारीख पर देय

महंगाई भत्ता शामिल होता है और इसका भुगतान एकमुश्त निपटान के रूप में एकमुश्त किया जाना होता है। उत्तरदाताओं के अनुसार, अवकाश वेतन की गणना करते समय किसी अन्य भत्ते को ध्यान में नहीं रखा जाता है।

(8) संबंधित प्रस्तुतियों की सराहना करने के लिए, प्रावधानों के प्रासंगिक हिस्सों का संदर्भ जिनके तहत इन भत्तों का दावा किया गया है, बिल्कुल आवश्यक है और ये हैं: -

उच्च न्यायालय के न्यायाधीश ब्यूज़, 1956 :

"नियम 2:

उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की सेवा की शर्तें जिनके लिए उच्च न्यायालय न्यायाधीश (सेवा की शर्तें) अधिनियम, 1954 में कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं किया गया था; होगा, और संविधान के प्रारंभ से ही उस राज्य की सरकार के सचिव का पद धारण करने वाले भारतीय प्रशासनिक सेवा के सदस्य पर लागू होने वाले नियमों द्वारा निर्धारित किया गया माना जाएगा जिसमें प्रमुख सीट है उच्च न्यायालय स्थित है।

बशर्ते कि, दिल्ली उच्च न्यायालय के न्यायाधीश और पुरिजाब उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के मामले में और

हरियाणा में सेवा की शर्तें भारत सरकार में प्रतिनियुक्ति पर नई दिल्ली में तैनात भारत सरकार के संयुक्त सचिव के पद पर कार्यरत भारतीय प्रशासनिक सेवा के सदस्य के लिए लागू नियमों द्वारा निर्धारित की जाएंगी।

एएच *इंडिया सेवा (छुट्टी) नियम,* 1955:

"नियम 20बी. *सेवानिवृत्ति* की आयु प्राप्त करने पर सेवा से सेवानिवृत्त होने वाले सदस्य को अवकाश वेतन के बराबर नकद भुगतान ।

(1) सरकार अखिल भारतीय सेवा (मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति लाभ) नियम, 1958 के उप-नियम (1) के तहत सेवा से सेवानिवृत्त होने वाले सेवा सदस्य को स्वतः ही अवकाश वेतन के बराबर नकद राशि की मंजूरी देगी । उनकी सेवानिवृत्ति की तारीख पर उनके खाते में अर्जित अवकाश की अवधि, अधिकतम 240 दिनों के अधीन।"

उच्च न्यायालय न्यायाधीश (सेवा की शर्तें) अधिनियम, 1954:

"22-एआई (एल *)-किराया मुक्त मकानों की सुविधा:*

प्रत्येक न्यायाधीश समय-समय पर इस संबंध में बनाए गए नियमों के अनुसार आधिकारिक निवास का उपयोग किराए के भुगतान के बिना करने का हकदार होगा।

(2) जहां कोई न्यायाधीश आधिकारिक आवास का उपयोग नहीं करता है, उसे हर महीने दो हजार पांच सौ रुपये का भुगतान किया जा सकता है।

"22बी. *—संवहन सुविधाएं:*

प्रति माह पेट्रोल की वास्तविक खपत का हकदार होगा; जो भी कम हो।"

याचिकाकर्ता का दावा आगे यह है कि चूंकि धारा 22-बी के संदर्भ में बिहार राज्य द्वारा उसे कोई आधिकारिक कार उपलब्ध नहीं कराई गई थी।

श्री न्यायमूर्ति एसएस संधावालिया (सेवानिवृत्त) पूर्व मुख्य न्यायाधीश, पटना उच्च न्यायालय, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़

बनाम भारत संघ और अन्य (आईएस तिवाना, जे.)

इस आशय के उनके बार-बार अनुरोध के बावजूद, वह अपनी कार में केवल 150 लीटर पेट्रोल का उपयोग कर सके जो उनकी स्टाफ कार के लिए था। उनके रुख के अनुसार, वह इस परिवहन सुविधा के बराबर नकद पाने का हकदार है, जिसमें से 150 लीटर पेट्रोल का मूल्य जो उसने विधिवत लिया था, घटा दिया जाए। उन्होंने इस दावे का मूल्यांकन रुपये में किया है. 3500 बजे आधार यह है कि बंगाल राज्य जहां न्यायाधीशों को कोई आधिकारिक कार उपलब्ध नहीं कराई गई थी, ने उपरोक्त परिवहन सुविधा के नकद समकक्ष रुपये की गणना की थी। प्रतिवादी-भारत संघ की स्पष्ट सहमति के साथ अपराह्न 3500 बजे। संक्षेप में, उनका दावा है कि उनके मामले में वाहन भत्ते की गणना रुपये पर की जानी चाहिए। 3500 प्रति घंटा घटा 130 लीटर पेट्रोल की कीमत जैसा कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के मामले में किया जा रहा था। यहां यह देखा जा सकता है कि 'यद्यपि जैसा कि पहले बताया गया है, बिहार राज्य ने इस याचिका का विरोध करने या जवाब दाखिल करने का विकल्प नहीं चुना है, फिर भी भारत संघ ने विशिष्ट शब्दों में इस बात से इनकार किया है कि उसने कभी भी ऐसी किसी व्यवस्था के लिए सहमति व्यक्त की थी । जैसा कि पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा सहारा लिया गया, यानी रुपये का भुगतान। 1954 अधिनियम की धारा 22-बी द्वारा परिकल्पित परिवहन की सुविधा प्रदान न करने के बदले में 3500 रुपये । रुपये पर मकान किराया भत्ते के उनके दावे को पूरी तरह से खारिज करते हुए। 2500 अपराह्न, भारत संघ द्वारा इस बात पर प्रकाश डाला गया कि याचिकाकर्ता की सेवानिवृत्ति के समय तक, एक न्यायाधीश को मकान किराया भत्ता देय था, जिसे उसके आधार वेतन के 12J प्रतिशत की दर से आधिकारिक सुसज्जित आवास प्रदान नहीं किया गया था। 16 दिसंबर, 1987 से, यानी याचिकाकर्ता की सेवानिवृत्ति की तारीख के लगभग पांच महीने बाद, मकान किराए की यह दर बढ़ाकर रु। 2500 बजे प्रतिवादी के अनुसार, याचिकाकर्ता अपने दावे को बाद में मकान किराया भत्ते में बढ़ोतरी पर आधारित नहीं कर सकता।

(9) पार्टियों के अलग-अलग रुख पर विचारपूर्वक विचार करने के बाद, हमारी राय है कि 'शहर प्रतिपूरक भत्ता और मकान किराया भत्ता को छोड़कर सभी भत्ते एक न्यायाधीश को उसकी सेवानिवृत्ति के समय देय होने चाहिए। जैसा कि ऊपर बताया गया है, 1955 के इस नियम के नियम 20-बी के साथ 1956 के नियम 2 के साथ पढ़े गए अनुसार उसे देय अवकाश वेतन के नकद समकक्ष की गणना करते समय विचार किया जाना चाहिए। 193f> नियमों के नियम 20-6 के उप-नियम (3) के मद्देनजर शहर प्रतिपूरक भत्ता और मकान किराया भत्ता को बाहर रखा जाना चाहिए, जिसमें यह विशेष रूप से प्रदान किया गया है कि शहर प्रतिकर भत्ता और मकान किराया भत्ता sJiall hoi 'को छुट्टी वेतन के नकद समकक्ष की गणना में शामिल किया जाना चाहिए, - tpndffl thjs- .नियम।

इस राय को तैयार करने के लिए हम 1955 के नियमों के नियम 2 के खंड (1) पर निर्भर करते हैं, जिसमें छुट्टी वेतन को सेवा के एक सदस्य को स्वीकार्य मासिक राशि के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसे इन नियमों के तहत छुट्टी दी गई है। यह *भारतीय संघ* बनाम *गुरनाम सिंह* में सर्वोच्च न्यायालय के उनके आधिपत्य पी एस द्वारा शासित है। (2) हालाँकि 1955 के नियमों का नियम 20-बी स्वयं *भारतीय* प्रशासनिक सेवा के सदस्य पर लागू होता है, न कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश पर, फिर भी 1956 के नियम के नियम 2 के आधार पर, इस नियम का लाभ इसे उच्च न्यायालय के न्यायाधीश द्वारा प्राप्त सेवा की शर्त के रूप में पढ़ा जाना चाहिए। प्रासंगिक टिप्पणियाँ हैं -

> "तब वह अवधारणा जिस पर नियम 20-बी आगे बढ़ता है, अधिनियम में तैयार की गई छुट्टी से संबंधित वैधानिक योजना से परिचित और अंतर्निहित है। यह उस योजना की आवश्यक सामग्री से तार्किक और उचित संबंध रखता है। उस पर, इसे उच्च न्यायालय के न्यायाधीश नियम, 1956 के नियम 2 द्वारा उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की सेवा की शर्तों को परिभाषित करने वाली वैधानिक संरचना में समाहित प्रावधान के रूप में माना जाना चाहिए। हम देख सकते हैं कि जिस तरह पेंशन प्राप्त करना एक अधिकार है, हालांकि सेवानिवृत्ति पर अर्जित होना , सेवा

की शर्त है, उसी तरह सेवानिवृत्ति की तारीख पर अर्जित अप्रयुक्त छुट्टी की अवधि के लिए छुट्टी वेतन के बराबर नकद भुगतान का अधिकार भी है। इसे सेवा की शर्त के रूप में माना जाना चाहिए।"

(10) इस निर्णय में एक और महत्वपूर्ण टिप्पणी यह है कि यद्यपि अखिल भारतीय सेवा (अवकाश) नियम, 1955 का नियम 20-बी अखिल भारतीय सेवाओं के सदस्यों पर लागू एक योजना का प्रावधान है, फिर भी इसकी प्रकृति और सामग्री में ऐसा कुछ भी नहीं है जो इसे उच्च न्यायालय के न्यायाधीश (सेवा की शर्तें) अधिनियम, 1954 में *अधिनियमित* छुट्टी से संबंधित वैधानिक योजना के लिए यथोचित *परिवर्तनों* के साथ अनुपयुक्त बनाता है। यदि इसे किसी अन्य प्रकार के मामले में लागू किया जाए, तो इसे ऐसे परिवर्तनों के साथ लागू करना होगा, जिनकी मामले की तात्कालिकता के कारण आवश्यकता हो सकती है। बेशक, ऐसे बदलावों को न्यूनतम सीमा के भीतर रखा जाना चाहिए, यानी प्रावधान में बदलाव किए बिना।

(11) इसलिए, इन टिप्पणियों के आलोक में यह पेटेंट है कि एक न्यायाधीश को देय छुट्टी वेतन के नकद समकक्ष की गणना करते समय, इस नियम को भुगतान की योजना में समायोजित किया जाना चाहिए

(2) एआईआर 1982 सुप्रीम कोर्ट 1265।

1954 अधिनियम द्वारा परिकल्पित अवकाश वेतन की। दूसरे शब्दों में, इस नियम को 1954 अधिनियम के एक भाग के रूप में पढ़ा जाना चाहिए, इसे व्यावहारिक बनाने या इसे पूर्ण प्रभाव देने के लिए आवश्यक चूक और परिवर्धन के साथ।

(12) इसी प्रकार, 1955 के नियमों के खंड (1) में दी गई छुट्टी वेतन की परिभाषा को इस नियम यानी 20-बी में पढ़ा जाना है, और उस तरीके से आवश्यक चूक, परिवर्धन या परिवर्तन के बाद नियम इस प्रकार पढ़ा जाएगा: —

> "सरकार सेवा से सेवानिवृत्त होने वाले न्यायाधीश को उसकी सेवानिवृत्ति की तारीख पर अर्जित अवकाश की अवधि के संबंध में अधिकतम 240 दिनों के अधीन स्वीकार्य मासिक राशि के बराबर नकद राशि स्वतः मंजूरी देगी /"

(13)इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि इस नियम के अनुसार एक न्यायाधीश को देय नकद राशि *उसे* आठ महीने या 240 दिनों के लिए देय राशि के बराबर होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में यहां 'राशि' का मतलब न्यायाधीश को 240 दिनों के लिए देय कुल राशि होना चाहिए।

(14) *गुरनाम सिंह के मामले (सुप्रा)* में निर्णय हालांकि उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश को छुट्टी वेतन के बराबर नकद भुगतान से संबंधित है, जो सेवा से सेवानिवृत्त हो गया है, फिर भी यह सटीक प्रश्न है कि कौन से भत्ते देय होंगे उनकी सेवानिवृत्ति के समय उन्हें देय अवकाश वेतन के नकद समकक्ष की गणना करते समय उन्हें ध्यान में रखा जाना चाहिए, यह सीधे तौर पर प्रश्न में नहीं था। 1955 के नियम संभवतः 1954 के अधिनियम के संदर्भ में न्यायाधीश को देय भत्तों पर ध्यान नहीं दे सकते क्योंकि ये नियम एक अलग सेवा के लिए थे। यह केवल 1954 अधिनियम के तहत बनाए गए 1956 नियमों के नियम 2 के आधार पर है कि इन नियमों को उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों पर उस हद तक *लागू* किया गया है जहां तक अधिनियम मौन है या इसका प्रावधान नहीं करता है।

(15) इस व्याख्या के आलोक में, याचिकाकर्ता को उसकी सेवानिवृत्ति की तारीख पर देय निम्नलिखित स्वीकृत भत्ते को नियम 20-बी के तहत देय अवकाश वेतन के नकद समकक्ष की गणना के लिए ध्यान में रखा जाना चाहिए। 1955 के नियम 1956

के नियम 2 के साथ पढ़ें:-

(i) सत्कार भत्ता @ रु. 500 प्रति माह.

(ii) प्रतिपूरक भत्ता @ रु. संविधान के अनुच्छेद 221 के तहत 900 प्रति माह।

(iii) वाहन भत्ता रु. की दर से. 3,500 PM घटा प्रति माह 150 लीटर पेट्रोल की लागत।

शहरी प्रतिपूरक और मकान किराया भत्ते के दावे को निश्चित रूप से इसी नियम के उप-नियम (3) यानी 1955 के नियमों के नियम 20-बी के मद्देनजर नजरअंदाज किया जाना चाहिए, जिसमें लिखा है: -

"(3) इस नियम के तहत छुट्टी वेतन के नकद समकक्ष की गणना में शहर प्रतिपूरक भत्ता और मकान किराया भत्ता शामिल नहीं किया जाएगा।"

(16) हमने 1954 अधिनियम की धारा 22-बी के तहत याचिका दावे के मूल्यांकन को स्वीकार करने के लिए चुना है। 3,500 अपराह्न इन कारणों से:—

(i) जैसा कि पहले ही बताया गया है, बिहार राज्य न तो इस दावे का विरोध करने के लिए उपस्थित हुआ है और न ही उन कारणों और परिस्थितियों की व्याख्या करने के लिए उपस्थित हुआ है जिनके तहत वह याचिकाकर्ता को स्टाफ कार प्रदान करने के अपने दायित्व का निर्वहन करने में विफल रहा । हमारे विचार से, उक्त प्रतिवादी द्वारा यह गैर-प्रतिवाद, दावे की निहित स्वीकृति के समान है;

(ii) भारत संघ द्वारा इस बात से इनकार किया गया है कि उसने कभी भी इस राशि के भुगतान के लिए पश्चिम बंगाल सरकार को अपनी सहमति नहीं दी थी, न कि रुपये की राशि के तथ्य के बारे में। अधिनियम की धारा 22-बी द्वारा परिकल्पित स्टाफ कार और 150 लीटर पेट्रोल उपलब्ध न कराने के बदले कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को 3,500 पीएम का भुगतान किया जा रहा है;

(iii) अधिनियम की धारा 22-बी के तहत अपने दायित्व का निर्वहन न करने के बिहार राज्य के रवैये के साथ सामंजस्य स्थापित करना उस प्रावधान को पूरी तरह से नकारना होगा; और

(iv) अन्यथा भी याचिकाकर्ता द्वारा किया गया दावा अनुचित प्रतीत नहीं होता है।

(17) अब याचिकाकर्ता के बाकी दावों के संबंध में, जैसा कि फैसले के शुरुआती भाग में (i) और (iv) में निर्दिष्ट है: -

(18) 1987 की सिविल रिट याचिका संख्या 764 में सुप्रीम कोर्ट के फैसले के आलोक में इसे हर तरह से स्वीकार किया जाता है *(सतीश)*

चंद्रा बनाम *भारत संघ और अन्य)* (3) ने 30 जुलाई, 1987 को निर्णय लिया (याचिका के अनुलग्नक पी. 7 की प्रतिलिपि बनाएँ) कि याचिकाकर्ता को एक लाख रुपये की राशि ग्रेच्युटी के रूप में देय थी। इसके विपरीत, केवल रु. 49,000 का भुगतान किया गया. शेष राशि रु. जुलाई, 1988 में उन्हें 51,000 रुपये का भुगतान किया गया, यानी उनकी सेवानिवृत्ति की तारीख के लगभग 12 महीने बाद। वह विलंबित भुगतान के कारण इस राशि पर ब्याज का दावा करता है। यह दावा सुप्रीम कोर्ट के लॉर्ड शिप द्वारा पहले के फैसले, यानी *केरल राज्य और अन्य* बनाम *एम. पद्मनाभन नायर (4)* में की गई टिप्पणियों के आलोक में उचित प्रतीत होता है , जिसमें यह फैसला सुनाया गया है कि " पेंशन और ग्रेच्युटी अब सरकार द्वारा अपने कर्मचारियों को उनकी सेवानिवृत्ति पर वितरित किया जाने वाला कोई इनाम नहीं है, बल्कि इस न्यायालय के निर्णयों के तहत, उनके हाथों में मूल्यवान अधिकार और संपत्ति बन गई है और इसके निपटान और संवितरण में किसी भी दोषी देरी पर विचार किया जाना चाहिए। * वास्तविक भुगतान तक वर्तमान बाजार दर पर ब्याज के भुगतान के दंड के साथ।' इसलिए, हम उसे रुपये की शेष राशि पर 12 प्रतिशत की दर से ब्याज देने की अनुमति देते हैं। 51,000 उनकी सेवानिवृत्ति की तारीख से, यानी 27 जुलाई, 1987 से उन्हें किए गए वास्तविक भुगतान की तारीख तक प्रभावी होंगे। इसी प्रकार (ii) और (iii) में निर्दिष्ट उनके दावों के संबंध में हमारे उपरोक्त निष्कर्षों के अनुसार गणना की जाने वाली और उन्हें देय राशि पर ब्याज के उनके दावे को बरकरार रखा गया है।

(19) जहां तक चिकित्सा शुल्क की प्रतिपूर्ति के लिए (iv) के तहत उनके दावे का सवाल है, पंजाब राज्य ने हालांकि अपने दायित्व का निर्वहन किया है, - 21 मार्च, 1989 के राज्यपाल के आदेश *के अनुसार* (प्रतिलिपि रिकॉर्ड पर रखी गई है) - स्टैंड के अनुसार राज्य के वरिष्ठ उप महाधिवक्ता श्री रियार के अनुसार, यह एक विशेष मामले के रूप में किया गया है - फिर भी इसने इस दलील पर अपने दायित्व को चुनौती देने का विकल्प चुना है कि उनकी सेवानिवृत्ति के बाद, याचिकाकर्ता पंचकुला में बस गया है और इसलिए, 24 अगस्त, 1973 के राज्य सरकार के निर्देशों के मद्देनजर वह इस राहत के हकदार नहीं हैं; 11 दिसंबर, 1973 और 11 दिसंबर, 1978 (याचिका के अनुलग्नक पी. 3 से पी. 5)। इन निर्देशों का सार यह है कि मुफ्त चिकित्सा सुविधाएं/चिकित्सा शुल्क की प्रतिपूर्ति केवल उन "अखिल भारतीय सेवाओं के सेवानिवृत्त सदस्यों, उनकी पत्नियों/पतियों और पंजाब

और हरियाणा उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीशों, उनकी पत्नियों/पतियों" के लिए उपलब्ध है। जो रिटायरमेंट के बाद पंजाब में बस गए हैं

(3) 1987 का सीडब्ल्यूपी 764, 30 जुलाई 1987 को निर्णय लिया गया।

(4) एआईआर 1985 एससी 356।

और अपनी पेंशन पंजाब सरकार के कोषागारों से प्राप्त करते हैं।" इस प्रतिवादी द्वारा यह स्वीकार किया गया है कि याचिकाकर्ता इसके किसी एक कोषागार से अपनी पेंशन आहरित कर रहा है। अब दलील यह है कि याचिकाकर्ता को चिकित्सा शुल्क की प्रतिपूर्ति या राज्य सरकार द्वारा वृक्ष चिकित्सा सुविधाओं के अनुदान का हकदार बनाया जा सकता है, उसे दोहरी शर्त पूरी करनी होगी, यानी, वह पंजाब में बस गया है और ड्राइंग कर रहा है। पंजाब सरकार के खजाने से उनकी पेंशन। हालाँकि, हम विभिन्न कारणों से इस याचिका में कोई योग्यता देखने में विफल रहे हैं। सबसे पहले, याचिकाकर्ता के रुख के अनुसार, जिस पर अन्यथा भी कोई विवाद नहीं है कि उसके पास पंजाब राज्य के भीतर काफी अचल संपत्ति है। केवल इसलिए कि इस समय वह पंचकुला में रह रहा है, जो चंडीगढ़ शहर का लगभग एक अभिन्न अंग है, जो पंजाब की राजधानी भी है, यह नहीं कहा जा सकता है कि वह पंजाब का निवासी नहीं है या पंजाब के बाहर बस गया है। पंजाब राज्य. दूसरे, पंजाब में बसने वाले सेवानिवृत्त लोगों के लिए £ की आवश्यकता केवल निर्देशिका प्रतीत होती है, अनिवार्य नहीं। प्रथम दृष्टया, पंजाब के क्षेत्र के भीतर या बाहर एक सेवानिवृत्त व्यक्ति का निपटान उसके या उसकी पत्नी के इलाज पर किए गए चिकित्सा व्यय की प्रतिपूर्ति के प्रश्न के लिए प्रासंगिक प्रतीत नहीं होता है। इस संबंध में जो बात महत्वपूर्ण प्रतीत होती है वह यह है कि ऐसे सेवानिवृत्त को एक इनडोर या आउटडोर रोगी के रूप में अपना इलाज कराना चाहिए जिसमें एक्स-रे, प्रयोगशाला और राज्य के अस्पतालों और औषधालयों आदि से ऐसी अन्य जांचें शामिल हैं। यह बहुत स्पष्ट प्रतीत होता है अनुलग्नक पी. 4 की सामग्री से ही। जब भारत संघ पंजाब सरकार के पेंशनभोगियों को चंडीगढ़ के पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च में मुफ्त चिकित्सा उपचार सुविधाएं प्रदान करने पर सहमत नहीं हुआ, जहां से याचिकाकर्ता और उसकी पत्नी ने अपना इलाज कराया, तो राज्य सरकार ने यह कहने के लिए निर्देश जारी किए: -

> "अब यह निर्णय लिया गया है कि पंजाब सरकार के पेंशनभोगी जिनमें पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश और उनकी पत्नियाँ/पति और अखिल भारतीय सेवाओं से संबंधित सेवानिवृत्त अधिकारी और उनकी पत्नियाँ/पति शामिल हैं, उपरोक्त चिकित्सा सुविधाओं का लाभ उठाते हुए। चंडीगढ़ में पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च को सबसे पहले, पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च टैरिफ के अनुसार शुल्क का भुगतान करना चाहिए और फिर पंजाब सरकार से प्रतिपूर्ति का दावा करना चाहिए। ऐसे पेंशनभोगी खर्चों की प्रतिपूर्ति के लिए आवश्यक दावे इसी प्रकार प्रस्तुत करेंगे

उस विभागाध्यक्ष को जिसके अधीन वे अपनी सेवानिवृत्ति के समय सेवारत थे। यह प्रतिपूर्ति योजना तत्काल प्रभाव से लागू होगी।"

अन्यथा भी राज्य सरकार की याचिका उसके किसी कोषागार के माध्यम से पेंशन भुगतान के याचिकाकर्ता के दावे को स्वीकार करने के साथ असंगत प्रतीत होती है। अनिवार्य रूप से उसे चिकित्सा प्रतिपूर्ति सहित अन्य सेवानिवृत्ति लाभों का भुगतान उसी राजकोष के माध्यम से किया जाना है। इसलिए, हम राज्य सरकार के उपर्युक्त रुख का खंडन करते हैं और सिवाय इसके कि वह अपने दायित्वों का निर्वहन करना जारी रखेगी जैसा कि अब किया गया है, - 21 मार्च, 1989 के *आदेश* के तहत, इस आदेश में उल्लिखित छूट की शक्ति का सहारा लिए बिना। .

(20) उपरोक्त दर्ज किए गए कारणों से, हम इसे स्वीकार करते हैं और हमारे उपर्युक्त निष्कर्षों के आलोक में याचिकाकर्ता के दावों को अंतिम रूप देने के लिए मैंडमस *की रिट जारी करते हैं* और उसे देय राशि का भुगतान आज से तीन महीने की अवधि में करने *करने का निर्देश देते हैं।* वह इस याचिका की लागत का भी हकदार माना जाता है जिसे हम रुपये 1,000 निर्धारित करते हैं।

पीसीजी

न्यायमूर्ति हरबंस सिंह राय, के समक्ष

प्रमुख आई.एस. सभरवाल-याचिकाकर्ता।

बनाम

सेना प्रमुख व अन्य,-प्रतिवादीगण

1988 *की सिविल रिट याचिका संख्या* 3846

5 अक्टूबर, 1989.

सेना निर्देश 31/86, एल/आर/74 2/76 *द्वारा संशोधित - याचिकाकर्ता को कार्यवाहक लेफ्टिनेंट कर्नल के पद पर पदोन्नत किया गया - लंबित अनुशासनात्मक मामले के आधार पर मूल मेजर के पद पर आरक्षण - अधिकारियों ने याचिकाकर्ता को नहीं लाने का निर्णय लिया परीक्षण-याचिकाकर्ता चाहे अभिनय रैंक के पुनर्मिलन का हकदार हो-कानून की मंजूरी के बिना गंभीर खुशी (रिकॉर्ड करने योग्य*) का पुरस्कार *टिकाऊ नहीं है।*

अभिनिर्धारित किया गया कि याचिकाकर्ता सेना निर्देश 31/86 के संशोधित खंड 7 (बी) के कारण उसके द्वारा खाली की गई रैंक को फिर से पाने का हकदार है क्योंकि उसे किसी भी मुकदमे में नहीं लाया गया था।

(पैरा 9)